

* Agronomy meanings :-

Agronomy शब्द ग्रीक माध्य के Agronos एवं Nomos शब्दों से बिलकर बना है। जिनका शास्त्रिक अर्थ क्रमशः भूमि एवं प्रबंध से है, अर्थात् Agronomy का शास्त्रिक अर्थ भूमि प्रबंधन से है।

Definition :-

"स्थ्य विज्ञान, कृषि विज्ञान की वह शाखा है, "जिसमें फसलों उत्पादन एवं भूमि प्रबंधन के सिद्धांतों एवं व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है।"

स्थ्य विज्ञान के क्षेत्र (Scope of Agronomy) :-

स्थ्य विज्ञान का फसलों उत्पादन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा सभ्य में हमारे देश की जनसंख्या एवं अर्थव्यवस्था के काम पर पहुँच द्यती है। इसलिये सधन खेती अथवा उत्पादकता बढ़ाकर आगामी दिनों के लिये आवश्यक खाद्यान्न समस्या का समाधान किया जा सकता है। स्थ्य विज्ञान का क्षेत्र बिन्दुकार इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है-

- (i) खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र में :- अन्न, दालें एवं तेल हमारे देश में उत्पादन की प्रमुख वरक हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या एवं उसकी भोजन के प्रमुख वरक हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या के माध्यम से कर सकते हैं। इस समय हम उत्पादन में आत्मनिर्भरता छोड़कर लिये हैं। दाल एवं तेल की अभी भी आयात करने की आवश्यकता पड़ती है, अतः दूलहनी एवं तिलहनी फसलों के उत्पादन की ओर हमें विशेष जोर देने की आवश्यकता है।

② रैशा उत्पादन के क्षेत्र में :- कपास, जूट एवं सिनार
हमारे देश में उगाये

जाने वाले प्रभुय फसल हैं। इन फसलों का उत्पादन कर
के हम वर्स्ट एवं अन्य औद्योगिक उत्पादों हेतु कच्चा
माल उपलब्ध करा सकते हैं, और विदेशी मुद्रा भी
अर्जित कर सकते हैं।

③ पशु-चारा उत्पादन के क्षेत्र में :- विश्व के आगामिक
शेतकरण में से भारतवर्ष के
पास केवल 20% शेतकरण है, परन्तु विश्व में पशुधन में
15% पशुधन केवल भारतवर्ष में पाये जाते हैं। यहाँ पर
चारा उत्पादन करा पाना बड़ा समस्या हो जाती है। जो 40% भूमि
में चारा उत्पादन किया जाता है। परन्तु बड़ी हुई जनसंख्या के
कारण चारा उत्पादन का भूमि कम होती जा रही है। और यह
कृषि-पशु पर ही आधारित है; जिससे पशुओं को पौष्टक
तत्व के लिये चारा उत्पादन करना आवश्यक है, इससे कृषि
में भी गति-आयेवी और पिशुपालन में भी उत्पादन मिलेगा।

④ उद्योगों के लिये कच्चे माल की पूर्ति के क्षेत्र में :- हमारे देश

की अर्थव्यवस्था कृषि-आधारित है। देश में कृषि उत्पादन आधारित विभिन्न उद्योगों जैसे -
चीनी, तेल, कपड़ा एवं रेशा उद्योग इत्यादि सस्य उत्पादन
आधारित हैं, और उद्योग में कच्चे माल की पूर्ति होती है।

⑤ राष्ट्रीय आय के क्षेत्र में :- सस्य उत्पादन के अंतर्गत विभिन्न

व्यवसायिक फसलों जैसे चाय, कॉफी,
रबर, तम्बाकू, मसाले, कपास एवं खेत इत्यादि का उत्पादन किया
जाता है। इसे विदेशी में नियति करने से विदेशी मुद्रा की
प्राप्ति होती है।



Date _____
Page _____

⑥ टिकाड़ खेती के शोर में :- बढ़ती हुई जनसंख्या कृषि के लिये खाधान कि प्रति करण पाना सस्य

वैज्ञानिकों एवं अन्य कृषि वैज्ञानिकों के समझ एक कही चुनौती है, जिससे आमि की उत्तरवार्ता शक्ति भी बनी रहे और पर्यावरण संगुलन भी बनी रहे, जिसके लिये फसल चढ़ाये अपनाकर और जैविक खाद का प्रयोग करना होगा। कीटनाशी, कवकनाशी, व शाकाशी द्वाओं का प्रयोग नहीं करनी होगी। आगे आनेवाली घटी के लिये टिकाड़ कृषि करनी होगी।

⑦ परिवार की रुक्शादाली में :- अच्छे विधि से उत्पादन से अच्छी उत्पादन होगी जिससे लोगों की आय बढ़ेगी। तथा परिवार भी रुक्शा रहेगा। ये तो ही देश की उन्नति का आधार है।

⑧ रोजगार के शोर में :-

(१९८२, २० अप्रैल) १२३८८ (१२३८८)

* Seed and sowing:-

Seed (बीज) :- लैंगिक अथवा बानरस्थितिक रूप से प्रवृद्धि देने वाली एक जीवी अणु है जो बुवाई और रोपण के लिये उपयोग की जाती है। सामान्यतया इसमें कीट-व्याधियों का कोई भी संक्रमण नहीं होता है एवं जिसमें कीट-व्याधियों का कोई भी संक्रमण नहीं होता है तथा जिसे सही बोने पर अच्छी पौधे संख्या प्राप्त होती है, वह बीज कहलाता है।

अंकुरण (Germination) :- एक बीज शुष्क से जो अनुकूल परिस्थितियों में एक सामान्य पौधा देने वाले सक्षम हो तथा एक नन्हे पौधी का बाहर निकलना एवं विकसित होना, अंकुरण कहलाता है।

बीज का महत्व (Importance of seed)

- (i) बीज अपनी जाति के रक्षक एवं संवर्धक हैं।
- (ii) यदि बीज शुष्क नहीं हैं एवं उसमें अन्य फसल भिड़ित हैं तो उत्पादन का शुल्य कभी भिलेगा।
- (iii) बीज ही एक रेसा कारक हैं जो अच्छे उत्पादन के लिए किसान का सबसे अधिक ध्यान चाहता है।

अच्छे बीजों के गुण :- एक अच्छे और गुणता वाले बीज में निम्न गुण होना चाहिये-

- (i) बीज की शौक्तिक शुष्कता :- बीज दूसरे फसलों की बीजों अथवा अप्रतिवारों के बीजों से मुक्त होना चाहिये। एक अच्छी गुणता वाले बीज में कंकड़, पत्थर, फसल अवशेष, भट्टी या धूल शामिल नहीं होना चाहिये।

(ii) बीज की आनुकोशिक एवं जातीय शुद्धता :- बीज बिलकुल अपनी जाति के अनुरूप होना चाहिये यदि इसकी फसल के ही डिसमों के बीज आपस में भिन्न हुए हैं तो शुद्धाई का समय पकने का समय, उनके ट्वार्ड तर्वरक एवं पानी की आवश्यकता, व्याधियों के प्रति-प्रतिरोधकता सब अलग - अलग हो जाती हैं, और उत्पादन में कभी जाती ही

(iii) बीज के रंग, रूप, आकार में समानता :- बीजों के रंग, रूप, आकार में समानता होनी चाहिये क्योंकि जो पौधे ही हों बीजों से निकलते हैं वे कमज़ोर एवं उनका विकास अच्छे से नहीं हो जाता है।

(iv) बीज में नमी की उपयुक्त मात्रा :- बीजों में उपस्थित नमी की मात्रा एवं अंकुरण का सीधा संबंध है। यदि बीज ज्यादा शुद्ध है तो बीज का अण भर भी सकता है। इसके अतिरिक्त यदि बीज में नमी की मात्रा अधिक है तो उसमें विभिन्न प्रकार के कवक का भी संक्रमण भी हो सकता है इस एवं इस प्रकार बीज अंकुरण क्षमता समाप्त हो सकती है।

(v) बीज परिपक्व हो :- बीज की अच्छी शुगवती पाने के लिये फसल के द्वाने कड़े होने के बाद काटना चाहिये। यदि बिना परिपक्व हुये बीजों की बोया जायेगा तो पौधे कमज़ोर होंगे एवं विभिन्न जैविय एवं अजैविय प्रभावों के अक्रमण के प्रति ज्यादा व्याहरणील होंगे।

(vi) बीज में अच्छी अंकुरण क्षमता हो।

(vii) बीज रोग रहित हो।

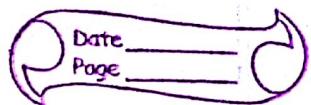
(viii) बीज सुखुप्त न हो।

बीजों के प्रकार :- बीजों के स्वभाव एवं उनके उत्पादन में अपनायी जाने वाली सावधानियों के आधार पर बीजों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है -

(i) नाभिकीय बीज (Nabhius seed) :- पादप प्रजनक बीज
जब खुल बीज पहली बार विकसित किया जाता है, जिसमें शत् प्रतिशत् आनुवांशिक व भौतिक शुद्धता होती है तथा प्रजनक इसे पैतृक संग्रह बीज के रूप में बीज प्रशुणक के लिये प्रयोग करता है, उसे नाभिकीय बीज कहते हैं।

(ii) प्रजनक बीज (Breeder's seed) :- ऐसी बीज जो नाभिकीय बीज से प्रजनक की देख-रेख में पैदा किये जाते हैं, उन्हें प्रजनक बीज कहते हैं। ये बीज उच्च आनुवांशिक मान वाले होते हैं जिनकी मात्रा कम होती है एवं बहुधा भट्टी भी होती है। इन बीजों की आनुवांशिक शुद्धता, उपज क्षमता, कीट-व्याघ्रियों के प्रति स्वभाव एवं अनुकूलता आदि के लिये बीजों को देश के विभिन्न खु-जलवायु शेत्रों के विभिन्न क्षेत्रों के विभिन्न स्तरों के परीक्षण प्रयोगों हेतु उपजाता है।

(iii) प्रमाणित बीज (Certified seed) :- ऐसी जो आधार संस्था की देख-रेख में पैदा किये जाते हैं, जिन्हें किसानों की व्यवसायिक फसल उत्पादन



(iii) आधार बीज (foundation seed) :- प्रजनक बीज से उत्पादित बीज को आधार बीज कहते हैं। इस बीज में विशेष भानकों के अनुसार आनुवांशिक गुण और शुद्धता सदैव बनी रहती है। ये बीज सदैव उसी संस्था विशेष जैसे - राष्ट्रीय बीज परियोजना, राज्य बीज निगम या राज्य में कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा उत्पादित किये जाते हैं।

(iv) प्रमाणित बीज (certified seed) :- ये बीज आधार बीज से प्रमाणीकरण संस्था की दैख-दैख में पैदा किये जाते हैं, जिन्हें किसानों को व्यवसायिक फसल उत्पादन के लिये वितरित किया जाता है। ये बीज राष्ट्रीय बीज निगम (NSC) या राज्य के कृषि विश्वविद्यालय या उत्पादक योजना के अंतर्गत किसानों के द्वारा पैदा किये जाते हैं।

* Method of seed sowing :-

बीज @ बुवाई की विधियाँ :-

① छिड़काव विधि (Broad casting method)

② कंतार बुवाई विधि (Line sowing method)

① छिड़काव विधि (Broad casting method) :- बीजों की

प्रक्रिया बुवाई करने की यह

एक अवैज्ञानिक विधि है। यह विधि सरल रूप से पुरानी है।

इस विधि में सामान्यतः ऐसे फसलों के बीज जो ये जाते हैं,

जो आकार में दौड़ते होते हैं, जैसे - बसीमि, लूसना, धान,

बाजरा, सरसों, रामतिल, लघुधान्य आदि। इस विधि में

बीजों को बीने के लिये सबसे पहले खेत छी तैयारी की

जाती है। इसके बाद बीजों को हाथों से छिड़कर दो

दिया जाता है। बीने के बाद, बीजों को या तो पारा चलाकू

झूमि में मिला दिया जाता है अथवा दूके कृषि यंत्र

जैसे - बखर इत्यादि से मिला दिया जाता है। इस विधि

की लाभ एवं नियन्त्रण प्रकार है -

लाभ :- ① यह आसान रूप से स्वती विधि है।

② बुवाई के लिये किसी भी यंत्र की आवश्यकता नहीं होती है।

③ इस विधि में कभी सभय में अधिक बुवाई की जा सकती है।

दानि :- ① बीज की भाता, गहराई रूप से बुवाई अन्तरण पर कोई नियंत्रण नहीं रहता है।

② जो बीज ज्यादा गहराई पर चले जाते हैं, वे सड़ जाते हैं, जबकि कुछ बीज सतह पर ही रह जाते हैं, वे अंकुरित नहीं हो पाते हैं।

- (3) इनमें अधिक बीज की आवश्यकता होती है।
- (4) फसल की सिंचाई में अधिक समय लगता है।
- (5) निंदाई - गुडाई में बाधा उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त निंदाई - गुडाई के यंत्रों का उपयोग भी संभव नहीं होता है।

② कतार बुवाई विधि (Line sowing method) :- इस विधि में बीजों की बुवाई कुतारों में की जाती है। जैत की तैयारी के बाद विभिन्न यंत्रों की मदद से यां हाथों से बुवाई या रोपण, कुतारों में की जाती है। यह एक वैज्ञानिक एवं आधुनिक विधि है। इस विधि के लाभ एवं दोषों निम्नलिखित हैं-

लाभः - (i) इस विधि में हम बीज बुवाई की भाँति घर निर्यात रख सकते हैं।

(ii) बीजों की बुवाई इच्छित गहराई एवं दूरी पर कर सकते हैं।

(iii) छिड़काव विधि की तुलना में बीज कम लगते हैं।

(iv) फसल की निंदाई - गुडाई आसानी से की जा सकती है।

(v) इस विधि में अधिक सिंचाई दक्षता मिलती है, साथ ही सिंचाई में कम समय लगता है।

(vi) फसल कटाई में भी आसानी होती है।

दोषः - (i) यह बुवाई की एक महंगी विधि है।

(ii) बुवाई में अधिक समय लगता है।

(iii) बुवाई के लिये यंत्रों की आवश्यकता होती है।

यह तीन प्रकार का होता है -

- (i) समतल बुवाई विधि
- (ii) रोपण विधि (Transplanting method)
- (iii) भेड़ विधि

(१) समतल बुवाई विधि :- समतल तैयार खेतों में बुवाई की निम्न विधि है।

(अ) देशी हल के पीढ़े बुवाई :- इस विधि में समतल तैयार खेत में देशी हल के

माध्यम से बनाये गये कुंडों में बुवाई की जाती है। एक मास, देशी हल से कुंड बनाता जाता है, जबकि पीढ़े से दूसरा आदमी युने इस कुंडों में बीजों की बुवाई करता जाता है। बीजों के बांह के बाद पाटा चलाकर बीजों को ढका दिया जाता है।

(ब) डिबलिंग विधि :- इस विधि में डिबलर थंग के माध्यम से बुवाई की जाती है। यह एक साधारण

थंग होता है, जिसका आकार आयताकार होता है। यह एक लोटे या लकड़ी के फ्रेम का बना होता है। इस फ्रेम में खुरियाँ लगा रहती हैं। इन खुरियों की ओपस की दूरी कम या अधिक उरने के लिये वैकल्पिक ढेढ़ या अ-य व्यवस्था रहती है। थंग के बीचों-बीच एक हल्दा भी लगा होता है। तैयार खेत में इस थंग को हटाकर रखते जाते हैं। खुरियों के कारण तैयार खेत में बने ढेढ़ों में बीजों की बुवाई की जाती है। बीजों को दुये बीजों की भिट्ठी से ढका देते हैं।

(स) डिलिंग विधि :- इस विधि में बीजों की बुवाई बैल-चलित या ड्रेकटर चलित सीड-डिल या सीड-कम-टिलाइज़ डिल के माध्यम से की जाती है। इस विधि में बीज एवं उर्वरक एक ही कतार में उल्जाते हैं।

(द) क्रिस-क्रास विधि :- इस विधि को आर-पार विधि भी कहते हैं। इस विधि में बीजों को दो दिशाओं में समक्षों पर बुवाई करते हैं।

(२) रोपण विधि (Transplanting) (पुष्ट कोड विधि)

* Tillage and tillth :-

* Tillage :- (परिष्कार) :-

भू-परिष्कार, भूमि का यांत्रिक परिवर्तन है, जो फसलों की बढ़वार के लिये आवश्यक उचित भू-परिस्थिति प्रदाय करता है। भू-परिस्थिति परिष्कार में वे सभी क्रियाएं सम्मालित हैं जो भूमि के अभीतक गुणों को परिवर्तित करने की लिये उपयोग में लायी जाती हैं।

भू-परिष्कार का वर्गीकरण (Classification of tillage)

① प्राथमिक भू-परिष्कार :- भू-परिष्कार की वे क्रियाएं, जो भूमि काटती हैं, भूमि की उपरी परत को तोड़ती हैं, इसके बिन्दी को पलटकर कूड़ा-करकट की भूमि में दबा देती है, प्राथमिक भू-परिष्कारों का लाभान्वयन है। ये क्रियाएं भूमि में प्राथमिक रूप से उचावा गहराई में की जाती हैं जो भूमि की उपरी परत को खुरदुरी बना देती है। प्राथमिक भू-परिष्कार में प्रमुख होने वाले प्रमुख यंत्र इस प्रकार हैं - बिन्दी पलटने वाले हल, तवेदार हल, चीजल हल, ऐरी डिस्क, हेरो, इसके रोटावेटर आदि।

इसके निम्न उद्देश्य हैं :-

- (i) अन्दे अंकुरण इसके पौधे निर्भाग को प्रोत्साहित करने हेतु संतोषप्रद स्तर की बीज शैख्या तैयार करना।
- (ii) खरपतवार नियंत्रण के लिये।
- (iii) भूमि की जलधारण क्षमता बढ़ाने के लिये।
- (iv) मृदा क्षरण को नियंत्रित करने के लिये।
- (v) कीट-व्याधियों को नियंत्रण के लिये।
- (vi) घेत में डाले गये खाद इसको भूमि में मिलाने के लिये।

② किसीयक-भू-परिष्करण (Secondary tillage) :-

प्राथमिक भू-परिष्करण के बाद की जाने वाली - भू-परिष्करण की वे क्रियाएँ जो भूमि को भुरभुरी बनाने के लिये, समतल करने के लिये एवं हृद्धता प्रदान करने के लिये की जाती हैं। किसीयक-भू-परिष्करण कहलाता है। ये क्रियाएँ भूमि में खाली वायु स्थानों को भरने, खरपतवारी को नष्ट करने एवं नभी संरक्षण भरने में सहायक होती हैं। किसीयक भू-परिष्करण के यंत्र कम गहराई पर कार्य करते हैं जो इस प्रकार हैं - हैं, हैं एवं कल्पनेटर आदि जो कभी कभी इस उद्देश्य के लिये प्रयोग किये जाते हैं।

उद्देश्य :- (i) खरपतवार नियंत्रण के लिये।

(ii) भूमि को भुरभुरी बनाने के लिये।

(iii) भूमि को समतल करने के लिये।

(iv) भूमि को हृद्धता प्रदान करने के लिये।

(v) खेत के फेला को तोड़ने के लिये।
(vi) चन्ना, आलू, मुँगफली, केदीय फसलों आदि में भूमि चढ़ाने के लिये।

अधिक भू-परिष्करण से हानियाँ :-

(i) मृदा संरचना पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

(ii) अधिक वायु संचार के कारण, जीवाशम पदार्थ की भूमि में कभी हो जाती है।

(iii) मृदा का कटाव अधिक हो जाता है।

(iv) खेत की तैयारी में अधिक समय तक धन लगता है।

* न्यूनतम श्रृं परिष्करण से लाभ :-

- (i) भूमि-का कटाव कम होता है।
- (ii) मृदा की संरचना ठीक रहती है।
- (iii) भूमि में जीवांशुपदार्थ पर्याप्त मात्रा में बने रहते हैं।
- (iv) सभजय व अम की वर्चत होती है।
- (v) अपन भी अद्वी होती है।

* श्रृं परिष्करण की आधुनिक धारणा :-

प्रास्परिक रूप से यह सोचा जाता था कि, बार-बार जमीन की अद्वी जुताई कर खेत की गति तैयारी करना चाहिये। जबकि, आधुनिक अवधारणा के अनुसार भूमि की न्यूनतम जुताई करना चाहिये। भूमि की तैयारी में होने वाले व्यर्थ सभजय की वर्चने के लिये न्यूनतम एवं शून्य श्रृं परिष्करण की विकालत आधुनिक अवधारणा के लक्षण की जाती है, जिन्हे संयुक्त रूप से "संरक्षण श्रृं परिष्करण" (Conservation tillage) की संसा ही गई है। इस प्रकार श्रृं परिष्करण का उद्देश्य, पारमिपरिक श्रृं परिष्करण की अपेक्षा भूमि से जलधस्त में कमी लाना है।

सामान्यतः इस प्रकार के श्रृं परिष्करण, परिचमी हैशी में अपनाये जाते हैं, जहाँ फसल की कटाई के बाद काफी मात्रा में भूमि की सतह पर फसल के अवशेष हो जाते हैं। ये फसल अवशेष, वर्षा के झुँझो की ओर से भूमि की रक्षा करते हैं। ऐसी परिस्थितियों में फसल अवशेषों को कम से कम हेट-हाइ कर छुवाई की जियाई जाती है।

* टिल्थ (Truth)

भू-परिकरण से निर्मित भूमि की अंतिक दशा जो पैद्यों की बढ़वार के लिये उपयुक्त होती है, उसे "टिल्थ" कहते हैं। भूमि की अंतिक दशा से आशय उसकी संरचनात्मक परिवर्तन से है जो अच्छा बीज अंकुरण हेतु प्रसल बढ़वार का प्रोत्साहित करती है। भू-परिकरण की क्रियाओं का उद्देश्य अच्छा 'टिल्थ' उत्पादित करना हेतु उसे बनाये रखना है।

अच्छे टिल्थ के गुण :- भू-परिकरण से निर्मित भूमि की अच्छी अंतिक दशा टिल्थ

- (i) निम्न गुण होना चाहिये :-
 - (पुँ) भूमि को कौमल होना चाहिये।
 - (पुँ) भूमि घरभूरी होना चाहिये।
 - (पुँ) भूदो समुच्चयों में जल हेतु वायु भूदों के सहने की क्षमता होना चाहिये।
- (ii) भूमि में वर्षा जल को धारित करने की उच्च शक्ति होनी चाहिये।
- (iii) भूमि में पानी को सोखने की उचित क्षमता होनी चाहिये।

- (iv) मृदा में कैशीय हेतु अकैशीय संबंध समान होना चाहिये।
- (v) भूमि में कम्ब मृदा संरचना होना चाहिये जिनमें मृदा समुच्चयों का आकार ५-८ mm का होना चाहिये।

* Plant Geometry (पौध ज्यामिति)

भूमि पर पौधों के वितरण की प्रवृत्ति अथवा प्रत्येक पौधों की उपलब्ध क्षेत्र की आकृति को पौधों ज्यामिति कहते हैं।

फसल के बीजों/पौधों को कई प्रकार से बोया या लगाया जाता है। बीजों की छुवाई या पौधों की सीख्या रीपाई करने से प्रत्येक पौधों को उसका बोने या लगाने की विधि के आधार पर अलग-अलग आकृति का क्षेत्र उपलब्ध होता है। यह क्षेत्र गोलाकार, वर्णाकार, ओयताकार या घनाकार हो सकता है। इन सभी आकृतियों में घनाकार छुवाई। विधि में सबसे अधिक पौधों सीख्या आती है।

* Plant Population / Crop population (पौध संख्या)

प्रति इकाई क्षेत्रफल पौध की सीख्या अथवा प्रत्येक पौधों की उपलब्ध क्षेत्रफल की पौध सीख्या कहते हैं। इसे पौधों की प्रति स्कड़ या प्रति हेक्टेयर के रूप में व्यक्त करते हैं। सधन बोई जाने वाली फसलों में प्रति इकाई क्षेत्रफल पौधों की सीख्या कम होती है। वहीं द्वार-द्वार बोयी जाने वाली फसलों में पौध सीख्या अधिक होती है।

* Crop Nutrition (पौधा पोषक तत्व) *

"वे तत्व जिन्हें पौधा जमीन सर्वं वायु से प्राप्त करता है एवं इसके बिना पौधा अपना जीवन चक्र पूरा नहीं कर पाता है, उन्हें आवश्यक पौधा पोषक तत्व कहते हैं।"

पौधा पोषक तत्वों की मापदण्ड - जैसा कि ऊपर उल्लेखित किया जा चुका है पौधा रोग के रोसायनिक विशेषण करने पर 40 तत्व विद्यमान पाये गये हैं, परन्तु उसमें से केवल 16 तत्व ही आवश्यक हैं। इन पोषक तत्वों की पौधों की अनिवार्यता का क्या आधार या मापदण्ड है, निससे यह कहा जा सके कि इक विशेष तत्व पौधों के लिये अनिवार्य है जबकि दुसरा तत्व नहीं।

ओरनान ने पोषक तत्वों की अनिवार्यता के तीन आधार। मापदण्ड निर्धारित किये हैं जो निम्नानुसार हैं -

(i) आवश्यक पोषक तत्व की अनुपस्थिति में पौधों की वृद्धि एवं विकास अवरुद्ध हो जाते हैं एवं पौधा अपना जीवन-चक्र पूरा नहीं कर पाता है।

(ii) इसके आवश्यक पोषक तत्व की अल्पता में इसे उसी तत्व विशेषी की प्रदायता कर दीक किया जा सकता है।

(iii) आवश्यक पोषक तत्व की अनुपस्थिति में पौधों की वृद्धि एवं विकास में कमी हो जाती है एवं पौधा अपना जीवन-चक्र पूरा नहीं कर पाता है।

(iv) वह तत्व विशेष सीधी रूप से पौधों के पोषण एवं उपापचय कियाजाएँ ऐ संबंध रखता है।

पौधक तत्वों का वर्गीकरण :-

पौधक तत्वों का वर्गीकरण निम्नलिखित आधारों पर किया गया है-

① आवश्यकता के आधार पर:- इस आधार पर निम्न व्यावरण में बोला गया है-

(a) संरचनात्मक तत्व:- इस वर्ग में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन आते हैं, इनकी पुर्ति पौधी जल से वायु द्वारा स्वर्ण करती है। कुह पौधों की 95% आणा ($C=45\%, O=45\%, H=4\%$) इन तत्वों का होता है।

(b) मुख्य पौधक तत्व:- इन तत्वों की पुर्ति बाहरी रूप में की जाती है औ ये तत्व निम्न के प्रभाव के होते हैं -

(i) प्राथमिक मुख्य पौधक तत्व:- इस वर्ग में NPK आते हैं, इन तत्वों की अधिकतम भाँति पौधों को उर्वरकी द्वारा ही जाती है, इसलिये इन्हें उर्वरक भी कहते हैं।

(ii) द्वितीयक मुख्य पौधक तत्व:- इस वर्ग में Ca, Mg, K आते हैं। इन्हीं आवश्यकता प्राथमिक तत्वों से कम होती है।

(iii) सुखम पौधक तत्व:- इनकी आवश्यकता बहुत सुखम भाँति में [ppm] से कम होती है, आयरन जित।

(iv) अनावश्यक परंपरालाभकारी:- वैज्ञानिक मानों ने निकोलसन द्वारा कुह तत्वों की आवश्यक भवित्वान्तिक लाभताप माना है। उन्होंने इन पौधक तत्वों को शार्यात्मक पौधक तत्व घोषिया है।
Ex:- Na, Al

२) पौधों के विभिन्न आणों पर प्रकट होने वाले कमी के लक्षणों के आधार पर :-

(१) कलिका पर लक्षण प्रकट होने वाले - B, Fe (8)

(२) नई पत्तियों पर लक्षण प्रकट होने वाले :- S, Cu, Mn, Fe

(३) पुरानी पत्तियों पर लक्षण प्रकट होने वाले - N, P, K, Mo, Mg

(४) नई तथा पुरानी दोनों - || - Zn (जिउ)

* विभिन्न पोषक तत्वों के कार्य रूप कमी के लक्षण :-

① नाइट्रोजन (N)

कार्य :- (i) पौधों की वाणस्पतिक वृद्धि तथा दरारेग प्रदान करना
(ii) क्लोरोफिल के निर्माण में

(iii) नाइट्रोजन पौधों में कार्बोहाइड्रेट के उपयोग में वृद्धि करता है।

② साग, सब्जियों एवं द्वे चारों की शुगरता में सुधार करता है।

कमी के लक्षण :- (i) पौधों की नियंत्रित पत्तियों में पीलापन आ जाता है।

(ii) पौधों बोना रह जाता है।

(iii) धान के फसल में कल्पकम छूटते हैं।

Manures and fertilizers

(खाद स्वं उर्वरक)

खाद (Manures) :- "पौधों स्वं जानवरों के कार्बनिक अवशेषों के अपद्यतित रूप तो खाद कहते हैं।"

खाद पौधों के लिये आवश्यक सभी पोषक तत्वों की कम या अधिक मात्रा में व्यापारण करता है। इस वर्ग में कम्पीट, गोबर, की खाद, तिलहनी खलियाँ, हरी खाद, जीव-जन्तुओं के अवशेष, मल-मूत्र से निर्भित खादें सम्मिलित हैं।

कार्गिकरण :- खादों को उनके स्वभाव के आधार पर कार्गिकृत किया गया है। कुछ खादें पौध अवशेषों से, कुछ जीव-जन्तुओं के अवशेषों से, पौध स्वं जन्तु द्वारा निर्भित अवशेषों से बनायी जाती हैं। इनमें से कुछ तर्में कम पोषक तत्व वाले कुह में से सांकर रूप में विधान रहते हैं। इन्हीं के आधार पर मानव हुए खादों का कार्गिकरण किया गया है -

(1) पौध निर्भित खादें :-

(2) स्थूल खादें :- → हरी खाद, पत्तियों की खाद, पौध अवशेषों की खाद, ~~लकड़ी~~ लकड़ी का बुद्धादा, समुद्री धासी।

(3) सैन्धिय खादें :- तिलहनी खलिया, बाना रस का मैल, राख, छीरा।

(2) जन्तु जनित खादः :- (व) स्थूल खोड़ :- गौबर की चाद, मानव विष्ठा, गौबर गूस का गारा।

6) सेन्ट्रिय खोड़ :- हड्डी का चूरा, महली का चूरा, तुकुट विष्ठा, रसतारूपी।

(3) भिश्रित खोड़ :- कम्पोस्ट, शहरी कम्पोस्ट, गांडे नाली का पानी, गांडे नालों का गारा, उत्रिम कम्पोस्ट।

* गौबर चाद (farm yard manure) :- पालतू पशुओं के भल-भूज, साथ में उनके विद्वावन एवं पशुओं की रिवलाये गये चारों के अवशेष पदार्थों के अपघटित सम्प्राण को गौबर की चाद कहते हैं।

* कम्पोस्ट :- पौधे अवशेषों, धरों का कचरा, जानवरों स्वरूप मनुष्यों के भल-भूजों का सूक्ष्मजीवीय अपघटित रूप कम्पोस्ट कहलाता है। अन्दरी तरह से अपघटित कम्पोस्ट-भूरे रंग का होता है। इस तरह कम्पोस्ट तैयार करने की विधि को कम्पोस्टिंग या कम्पोस्ट बनाना कहते हैं।

* हरी चाद :- हरी चाद जुताई बारा भिट्ठी में अपघटित हरे पौधों उतकों भिट्ठी की भौतिक संरचना एवं उर्वरता को सुधारने के उद्देश्य से पलवने की की छिया है।

Details :- Blki note

* उर्वरक (Fertilizers) :- "कारखानों में बनाये जाने वाले वे रासायनिक पदार्थ जो पौधों की पूर्ति के लिये आवश्यक हैं जो भू-य से इस यान्त्रक से आधिक तत्वों की पूर्ति करते हैं, उर्वरक कहलाते हैं।"

उर्वरकों का प्रयोग :- पौधक तत्वों की उपस्थिति के आधार पर उर्वरकों को तीन वर्गों में बांटा गया है-

① एकल उर्वरक :- जो क्षमी उर्वरक जिनमें किसी भी एक पौधक तत्व की पूर्ति होती है, ऐसा उर्वरक कहलाता है।
जैसे - शूरिया ($N-46\%$)

② जटिल उर्वरक :- ये उर्वरक कभी से कभी दो पौधक तत्वों की पूर्ति करते हैं। तथा इन्हे रासायनिक सफ से तैयार किया जाता है। इन्हे दो वर्गों में बांटा गया है-

(A) क्लिटिल लारी :- ये कुरुक्षय दो तत्वों की पूर्ति द्वरा होती है।
जैसे - DAP

(B) तीन तत्व लारी :- ये तीन कुरुक्षय पौधक तत्वों की पूर्ति द्वरा होती है।
जैसे - DFFCO ($12:32:16$)

③ मिश्रित उर्वरक :- इन्हें अंतिक रूप से मिलाकर तैयार किया जाता है। इन्हे दो वर्गों में बांटा गया है-

(A) अपूर्ण मिश्रित उर्वरक :- इन उर्वरकों से नत्रजनन, फारस की रस, पौर्यशियन में से किसी भी दो तत्व की पूर्ति होती है।
जैसे - शूरिया के साथ पौर्यशियन।

(B) पूर्ण मिश्रित उर्वरक :- इस प्रकार के उर्वरकों से तीनों प्रभाव जैसे नाइट्रोजन, फारस के साथ पौर्यशियन।

→ नाइट्रोजन धारी उर्वरक :-

इन उर्वरकों को चार आणों में विभाजित किया गया है-

① नाइट्रोट उर्वरक (N_3^-) :- लगभग सभी फसलेनाइट्रोजन को नाइट्रोट के रूप में लिने हैं। ये उर्वरक मूदा परक्षारीय प्रभाव देते हैं। ये उर्वरक अधिक घुलनशील होने के कारण पौधों की शीघ्र उपलब्ध होते हैं। साथ ही इनकी लिंचिंग कारण सर्वाधिक हानि होती है। जैसे कृषि फसल ($\text{P} + \text{K}_2\text{O}$) आदि।

Ex:- भोजियम नाइट्रोट, कैलिसयम नाइट्रोट, पॉटशियम नाइट्रोट

② अमोनियम उर्वरक :- (NH_4^+) :- इन उर्वरकों की निवालन कारण हानि बहुत कम होती है। इसी कारण धान की फसल में नाइट्रोजन का उपयोग इसी रूप में करते हैं। इन उर्वरकों का मूदा पर अन्तर्लिय प्रभाव होता है।

जैसे - अमोनियम सलफेट (NH_4SO_4) आदि।

③ अमोनियम नाइट्रोट उर्वरक :- ($\text{NH}_4 + \text{NO}_3$) :-

इन उर्वरकों में नाइट्रोजन अमोनियम होनी ही रूपों में उपार्जिती है। इस कारण इनका उपयोग सभी प्रकार के अन्तर्मित्रियों जाता है।

सबसे अन्तर्मित्रियां उर्वरक हैं।

जैसे - कैलिसयम अमोनियम नाइट्रोट - $25\text{g}/\text{N}$

अमोनियम नाइट्रोट - $133\text{g}/\text{N}$

④ अभाइड उर्वरक :- जड़ों कारा नाइट्रोजन इस रूप में साथ
ग्रहण नहीं की जाती है। जबकि पत्तियों
कारा नाइट्रोजन एमाइड रूप में ग्रहण किये जाते हैं।
यह उदासीन प्रकृति के रूप में होता है।
जैसे - कुरिया - $46\% \text{ N}$

खाद्य सबूतरक में अन्तर :-

* Water Resources (जल स्रोत)

वर्षा का पानी सर्व बर्फ का ~~खाली~~ चिरना प्रकृति का मुख्य जल स्रोत है। ये जल (उद्ध मात्र) में गृहमि में सौख़िया जाता है। तथा शेष मात्रा नदी, नालों, तालाबों सर्व इनीलों के द्वारा समुन्द्रों में पहुँच जाता है। कोस्तब में सिंचाई के लिये पानी की कमी नहीं है। देश में जितनी वर्षा होती है, उसका आधे से अधिक पानी बढ़कर नदियों में चला जाता है। देश के समस्त सिंचित क्षेत्रफल का लगभग ५०%, भाग सिंचाई के लिये नहरों पर निर्भर है। तथा ३५%, क्षेत्रफल की कच्चे सर्व पक्के कुओं से सिंचाई की जाती है। औष १५%, क्षेत्रफल टृथुरवेल, झील एवं तालाबों से सिंचाई की जाती है।

सिंचाई के लिए पानी का स्रोत

द्यरातलीय स्रोत

- नहरें
- तालाब
- नदियाँ
- झरने
- बोध
- नाले

कूमिगत स्रोत

- कुआ़
- हस्तचलित नल
- नलकुप
- पाताल तोड़ कुआ़

Soil-water-plant relationship

(मृदा-जल-पौधों के संबंध)

ठिसी स्थान की सिंचाई व्यवस्था जो अधिक उपयोगी बनाने के लिये उसके लिये मृदा-जल-पौधों के संबंध का अध्ययन और इसका है। मृदा-जल-पौधों का मृदा से मृदा जल से संबंध एक सर्वभान्धतय है। यह सम्बन्ध मृदा की भौतिक दशा, जलवायु के झेंड कारकों से पौधों की त्रिमि आदि से प्रभावित होता है। मृदा-जल का सम्बन्ध मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं से फसलोत्पादन को परोक्ष रूप में प्रभावित करता है।

मृदा जल से पौधों के सही-संबंधों का सही ज्ञान प्राप्त करने के लिये मृदा जल स्रोत, मृदा के जल के रूप, उपलब्ध मृदा-जल, मृदा जल का संसाधन, पौधों का मृदा जल का अवशोषण, फसलों की जलभाँग, सिंचाई कब करें, उतनी भाग में सिंचाई का जल प्रयोग तरे अथवा सिंचाई कितनी की जाये, सिंचाई की संरक्षा से सिंचाई की विधि का तकनीछी ज्ञान होना आवश्य है। फसलोत्पादन में वृद्धि से सिंचाई से अरपुर लाभ होने के लिये पौधों की जड़ों का भूजा से जलापूर्ति होना आवश्यक है।

पौधों के लिये उपयोगी जल का अवशोषण से आपूर्ति निम्नलिखित बातों पर निश्चिर छरती है-

- (1) मृदा के भौतिक गुणों पर
- (2) पौधों के गुणों पर
- (3) मौसम पर।

* Crop Water requirement : (फसल की जलमंगल)

"एक किलोग्राम शुक्र पदार्थ उत्पन्न करने के लिए पौधा के विभिन्न अंगों द्वारा जितने किलोग्राम पानी वाष्प के रूप में उत्सर्जित किया जाता है, उसी वाष्पों के अनुपात अच्यवाती पौधों की जलमंगल के बरे हैं।"

$$WR = E + T + MU + WSU + TL / IL$$

$E =$ वाष्पीकरण

$T =$ वाष्पोत्सर्जन

$MU =$ उपापचयी क्रिया

$WSU =$ विशेष उपयोग

$IL =$ सिंचाई के दौरान जल की हानि

विभिन्न फसलों की जलमंगल -

पाना - 200 - 250 cm. (कुल अवधि में)

घान - 100 - 150 cm.

गेहूँ - 45 - 65 cm.

सोयाबीन - 70 cm. (कुल अवधि में)

फसलों की जलमांग को प्रभावित करने वाले कारक :-

फसलों की जलमांग पर निम्न कारक प्रभाव डालते हैं -

① तापक्रम :- वायुमण्डल और तापक्रम की अधिकता होने पर पौधों की जलमांग बढ़ती है, तथा तापक्रम के कम होने पर जलमांग घटती है। इसी कारण गर्भियों में सहियों की अपेक्षा जलवीजनवी सिंचाई करने की आवश्यकता होती है।

② वायुमण्डल की आर्द्धता :- पौधों की जलमांग पर वायुमण्डल की आर्द्धता का प्रभाव पड़ता है। वायु में आर्द्धता कम होने से फसल की जलमांग बढ़ जाती है। तीक इसके विपरित वायु में आर्द्धता अधिक होने से फसल की जलमांग कम हो जाती है।

③ फसल की किस्म :- विभिन्न फसलों की जलमांग अलग-अलग होती है। जैसे- चान, आलू, बसीमा का अधिक स्वैद्धति दलहनी फसलों का कम।

④ भूमि की किस्म :- बलुई भूमि में छाँटों का आकार बड़ा होने के कारण पानी अधिक समय तक छहर नहीं पाता है। जिसके छाँट बलुई मृदा की जलमांग अधिक होती है। तीक इसके विपरित कम 80% की जलमांग कम होती है।

⑤ भूमि की उर्वरता :- पर्याप्त जीवांश खाद होने पर जलमांग कम।

⑥ पत्तियों का आकार :- जिन फसलों की पत्तियाँ बड़े आकार की, हरी स्वैद्धति होती है, उनमें वाष्णोत्सर्जन त्रियाकारा पानी की दानि होती है। तथा उनकी जलमांग बढ़ती है। जैसे- अरबी, केला, भिट्ठी आदि की तथा होठे पत्तियों वाली फसले जैसे- चना, मसूर आदि की जलमांग कम होती है।

~~क्र.~~

Water use efficiency

(जल उपयोग क्षमता / दक्षता)

(क्षमता या दक्षता दोनों ही लड़ा)

"सिंचाई के लिये प्रयुक्त कुल जल की मात्रा और पौधे को दोनों उपयोग किये गये जल की मात्रा के प्रतिशत मनुपाति हिको जल उपयोग क्षमता छह है।"

$$WUE = \frac{Y}{ET}$$

जहाँ WUE = जल उपयोग क्षमता

$$Y = \text{आर्थिक उपज उत्पादन}/\text{वर्ष}$$

$$ET = (\text{वाष्णविभरण} + \text{वाष्णविस्तरण})$$

जल उपयोग क्षमता को निम्न रूप में ओंकार जा सकता है।

① Consumptive water use efficiency :-

उभका अंकलन करने के लिये वैज्ञानिक अलावा फसलों की उपायन्य और वर्षयक्ताओं और व्यय पानी को भी सम्बलित उल्लेख है।

② Field water use efficiency :-

यदि जल उपयोग क्षमता के अंकलन में केवल ET के वर्जन्य प्रति इकाई फसल की जल मांग पर प्राप्त उपज की मात्रा निकाली जाए तो यह प्रदूषजनक उपयोग क्षमता कहलाता है।

जल उपयोग दक्षता को प्रभावित करने वाले कारकः-

- ① जलवायु
- ② फूसल एवं प्रजाति
- ③ सम्यक्रियाएं
- ④ मृदा की उम्मतथा प्रवार
- ⑤ बाध्योत्सर्जन एवं उम्मी
- ⑥ सिंचाई
- ⑦ खाद्य एवं उपर्कों का प्रयोग
- ⑧ पौधा वन्यजीव

जल उपयोग क्षमता को बढ़ाने के उपायः-

- ① सिंचाई की नालियों का चौड़ी व गहरी बनानी चाहिये, जिससे उम्मेज़फल से पानी का वापिश्वरण होने पाये एवं नाली से वाधीउठने भवि त्रु उम्मिया जा सके।
- ② नाली को हलान होना चाहिये, जिससे पानी तेजी से खेत में जाये और percolation से उम्म से उम्म छाति हो।
- ③ सिंचाई नाली त्रु आसपास खरपतवार नहीं होने चाहिये।
- ④ खेत की चैटबंदी करनी चाहिये ताकि पानी बहत बाहर न जाये।
- ⑤ अगर मृदा बहुत है तो उसमें जीवांश पदार्थ का उपयोग करना चाहिये जिससे मृदा भल की धारण शक्ति को बढ़ाया जा सकता है।
- ⑥ यदि संभव होतो नालियों की पक्की बनादेनी चाहिये।
- ⑦ मथा संभव खेत की ही खरपतवार रहित रखना चाहिये।
- ⑧ सिंचाई की बोहारी या द्रिप्रविधि का उपयोग करके जल उपयोग क्षमता बढ़ायी जा सकती है।
- ⑨ अप्रूवित उपयोग को रोकना चाहिये।

* Irrigation - ~~scheduling criteria and methods~~ :-

सिंचाई :- "भूमि में कृत्रिम रूप से पानी देने की
सिंचाई कहते हैं।"

→ सिंचाई की विधियाँ :-

① सतह सिंचाई :- यह सिंचाई की सबसे पुरानी रूप
प्रचलित विधि है। हमारे देश में ७५%
सिंचाई कार्य इसी विधि से कारोबारिया जाता है।
इस विधि में सिंचाई अवधि पर लिया जाता है। इसके
निम्न प्रशार हैं -

② बाढ़ या उत्पलावन विधि :- यह पुरानी अवधानित विधि
है। इस विधि में द्वाल के द्वारा
पानी खेत में पहुँचना है। जिसके लिये भूमि समतल होना
आवश्यक नहीं है। यह जल स्रोत बड़े स्तर सहित
होने पर उपयोग की जाती है।

③ चेक बैसिन या क्यारी विधि :- इस विधि में सिंचाई
द्वाल के लिये चेटा की क्यारीरियों में बाटविया
जाता है। इसमें पानी की अधिक दिनों तक रोड़ा जाता है।

④ सीमांत यद्दी :- खेत की लम्बाई तथा द्वाल की दिशा
की ओर लम्बी पट्टियाँ विभाजित
जाती हैं। तथा हाल ०.५ m. रखी जाती है।

⑤ कुड़ विधि :- जिन फसलों को मेड़ या प्ररीह में लगाया
जाता है जैसे गन्ना, आलू, मक्का आदि।
उन्हें कुड़ विधि के द्वारा पानी दिया जाता है।

- ② अधीसतही विधि :- इस विधि का उपयोग बहुत हिया जाता है, जहाँ अधीसतह कठोर होता है। यह ऐसी भूमि के लिये उपयोगी है, जहाँ जलधारण क्षमता उच्च तथा अंतः स्पैदन ऊंचाई होती है। आते ही यह ऊंचाई प्रचलित नहीं है, फिर भी गुजरात व केरल में सुपारी व नारियल के लिये किया जाता है। यह एडमैंगी विधि है।
- ③ बोकारी या स्पिकलर विधि :- यह शास्त्रिय विधि है, जिसमें पानी द्वारा सौंधे के रूप में डिया जाता है। अम्बल और बलुई में स्पिकलर सर्वाधिक उपयुक्त होता है। यह सबसे अधिक उरियाणा में प्रचलित है। यह हरिगोशन के लिये भी उपयुक्त है।
- ④ ट्यूकया ड्रिप विधि :- यह सबसे आधुनिक विधि है। इसका विवास इंडिया इंडिया में हुआ है। यह जल अभाव और लवण प्रभावित द्यानों के लिये उपयुक्त होता है। इस विधि में पानी जड़ों के तक झुंडी के रूप में पहुँचता है। इसी जल उपयोग क्षमता 70-90% तक अथवा सबसे अधिक होती है। इनमें बाहु विधि की तुलना में 2-2.5 गुना अधिक सेर्विचित डिया जा सकता है। इस विधि के द्वारा खरपतवार का भी नियंत्रण डिया जा सकता है।

* सिंचाई के नियरिंग के सिद्धांत :-

पौधों के सम्पूर्ण जीवन का लक्ष्य है कि वातानु उपापचय की क्रियाओं के सुचारा रूप से सम्पन्न होने के लिये पानी की मात्रायुक्ति होती है। अवधारणा के प्रभाव से यह क्रियाएँ सुचारा रूप से नहीं हो पाती जिसमें पौधों की वृद्धि एवं विवास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। (पौधों में होने वाली इन क्रियाओं के कारण वृद्धि से नभी तो अवशोषण होता रहता है, जिससे सूक्ष्म में पानी की मात्रा निरंतर घटती जाती है।) सिंचाई के नियरिंग के रूप से समय मुख्यतः हो बातें जैसे मूँह सिंचाई छोड़नी जायें (उ) छिटनी जी जाये इयान में इसकी आवश्यकता है। फसल में सिंचाई की निश्चित अवस्था आने पर ही सिंचाई छोड़नी चाहिये अन्यथा लाख के बजाय हानि अधिक होगी। सिंचाई की कम या अधिक मात्रा भरने पर भी फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

सिंचाई के नियरिंग की विधियाँ :-

① जलवायु संबंधी आंकड़ों के आधार पर :- जलवायु संबंधी सिंचाई का नियरिंग ठरने को कलाइ भेटोलोजिकल स्प्रोच कहते हैं। ~~किम्बा विशेषों से~~ इसके ही विधियाँ हैं -

- ① अनुपात विधि
- ② डिबा धारणिकरण विधि

② मृदा नमीक्षण के आधार पर :- विभिन्न फसलों की आकारिकी, जल प्रणाली परियों की स्थिति, जीवनकाल आदि भिन्न-भिन्न होने के कारण उनकी जल आवश्यकता तथा उनकी जल सेवनाशी भिन्न-भिन्न होती है। विभिन्न फसलों में आकृति उपलब्ध जल लम्ब का स्तर

फसल का नाम	आकृति उपलब्ध जल लम्ब स्तर (%)
शेइ, गन्ना, कपास, मट्ठा	50
आलू, तमाकु	25
बर्मिंग, द्व्यान	70
मटर और गन्ना	65
बाजरा	75

③ पौधों की वृद्धि की क्रांतिक अवस्था के आधार पर :-

सामान्य दृष्टि अौ मैं कृषकों द्वारा कसली की वृद्धि की अवस्था अौ मैं पौधों की जल की अधिक आवश्यकता होती है। प्रत्येक पौधे के जीवनकाल में विभिन्न क्रियाएँ होती हैं। अतः जल की विभिन्न अवस्थाएँ परिवर्तन होना जरूरी है।

पौधों के विभिन्न क्रियाएँ अवस्थाएँ मैं जिन अवस्था पर सिसाइन करते से सर्वाधिक लाभ होता है, उसे ही पौधे की क्रांति अवस्था भलते हैं।

④ सिंचाई निर्धारण की विशिष्ट विधि :- सिंचाई निर्धारण की यह विधि जलवायुवीय स्थंभ में नमी क्षय विधि का सम्मिलित रूप है। इस विधि में यह दोनों को भविष्य देते हैं। यह विधि सर्वतम छोटी है।

5) सूचक पौधों कारा नमी निर्धारण :- कुछ पौधों से संदेह है कि जो नमी की कमी के लक्षण बहुत जल्दी प्रदर्शित होते हैं। उन पौधों को हम सूचक पौधे कहते हैं। मुख्य रूप से तीन चार जगह सूचक पौधे जैसे सूरजमुखी की बुवाई भूरे होते हैं। यदि सूचक पौधों में मुरझाना के लक्षण नजर आ रहे हैं तो यह संकेत होता है कि अब हमारी मुख्य कसल की सिंचाई के देनी चाहिये।

6) पादप घनत्व वहाँ तक सिंचाई का निर्धारण :- सिंचाई निर्धारण की यह विधि इस बात पर आधारित है कि यदि पौधों का घनत्व ज्यादा हो गा तो उपलब्ध जल इस शीघ्र हो जायेगा। ऐसे हुए स्कासी सिंचाई निर्धारण की संज्ञा उस विधि को दी जाती है जो सिंचाई की अवस्था का राज पूर्व में देखता है। अतः इस विधि में हम रखेते हैं कि यारे कोनो पर पौधों की संरक्षा सामान्य से चार गुनी कर लेते हैं और सिंचाई निर्धारण के लिये इन कोनों के पौधों पर ध्यान देते रहते हैं। यदि कोनों के पौधों में मुरझान के लक्षण स्पष्ट हो रहे हैं तो यह निष्कर्ष निभाला जाता है कि आने वाले एक दो दिन में कसल की सिंचाई कर देनी चाहिये।